29

स्वामी-कर्मचारी सम्बन्ध
[EMPLOYER AND EMPLOYEE RELATIONS]

केन्द्रीय सरकार के कर्मचारियों (तृतीय एवं चतुर्थ वर्ग) की जुलाई 1960 की सामान्य हड़ताल ने जो किन्हीं कारणों से असफल हो गई थी, जनता तथा सरकार दोनों का ध्यान कर्मचारियों और सरकार के मध्य सम्बन्धों की समस्या की ओर ध्यान आकर्षित किया। शासन से यह आशा की जाती है कि वह स्वयं को एक आदर्श स्वामी सिद्ध करे। उसका यह भी कर्तव्य है कि वह अपने कर्मचारियों के कष्टों के समाधान के लिये समुचित साधनों का विकास करे। निम्न शीर्षकों के अन्तर्गत इस समस्या पर विचार किया गया है—

1. समुदाय बनाने का अधिकार,
2. हड़ताल का अधिकार, तथा
3. विवादों पर वार्ता करने और निबटाने के साधन।

समुदाय बनाने का अधिकार (Right to form Association)—इस अधिकार में तीन समस्याएँ अन्तर्निहित हैं— (i) क्या लोक सेवक अपना समुदाय या संघ बना सकते हैं? (ii) क्या ये संघ शासन के बाहर के मजदूर संगठनों से सम्बन्धित हो सकते हैं? (iii) तथा क्या ये संघ किसी राजनीतिक दल में सम्मिलित हो सकते हैं? इस विषय में प्रत्येक देश में अलग-अलग मान्यताएँ एवं रिवाज हैं।

ब्रिटेन—ब्रिटेन में संघ बनाने के लिये लोक कर्मचारी सर्वथा स्वतन्त्र हैं और उनके सदस्य रह सकते हैं, चाहे सरकार ने उन संघों को मान्यता दी हो या न दी हो। कोई भी संघ अपने वार्षिक अधिवेशन में प्रस्ताव पारित करके या अपने सदस्यों के मतदान द्वारा स्वीकृत करने पर किसी भी बड़े ट्रेड यूनियन आन्दोलन का भागीदार बन सकता है।

1927 तथा 1946 के बीच व्यापार-विवाद अधिनियम ने स्थायी कर्मचारियों को ऐसे संघ से सम्बन्ध रखने का निषेध कर दिया था। किन्तु 1945 की मजदूर सरकार ने 1946 में यह अधिनियम रद्द कर दिया था। फलस्वरूप कुछ लोक-सेवक संघों ने ट्रेड यूनियन कांग्रेस से पुनः सम्बन्ध स्थापित कर लिये। किन्तु व्यावसायिक, निष्पादकीय तथा प्रशासकीय लोक कर्मचारियों का प्रतिनिधित्व करने वाले समुदाय या संघ इससे अलग रहे। राजनीतिक दलों में सम्मिलित होने के पूर्व लोक सेवा संघों को एक निश्चित प्रक्रिया से होकर गुजरना पड़ता है। लोक कर्मचारी संघ राजनीतिक प्रयोजनों के लिये किसी सामान्य निधि का प्रयोग तक नहीं कर सकते।

अमेरिका—यहाँ संघीय कर्मचारियों को किसी भी सेवा संगठन का सदस्य बनने का इस शर्त पर अधिकार है कि उनका संगठन या संघ अपने सदस्यों के विरुद्ध हड़ताल के लिये बाध्य नहीं करेगा।

लोक कर्मचारियों के संघों ने स्वेच्छापूर्वक अपनी सदस्यता कुछ निश्चित प्रवर्गों तक सीमित रखी है। अतः (i) यन्त्रकारों तथा पक्ष रोजगारों के कर्मचारियों, (ii) डाक सेवाओं के विभिन्न व्यावसायिक समूहों; जैसे—पत्रवाहकों, लिपिकों एवं डाक पर्यवेक्षकों, (iii) सफेदपोश कर्मचारियों के पृथक्-पृथक् संघ बन गये हैं। इस प्रकार वे संघ जिनसे सफेदपोश लोक कर्मचारियों का सम्बन्ध है, केवल उसी समूह के कर्मचारियों तक अपनी सदस्यता सीमित रखते हैं। इसी प्रकार, सरकारी कर्मचारियों के अमेरिकी संघ की सदस्यता या पत्रवाहकों

Scanned with CamScanner

के राष्ट्रीय संघ की सदस्यता सरकारी कर्मचारियों तक ही सीमित है। यह संघ अमेरिकी श्रम संघ से सम्बद्ध है जो निजी क्षेत्र से सम्बन्धित संघों से मिलकर बना है। "इन सम्बद्ध निकायों के संविधान में हड़ताल के वाक्यांशों को रद्द किया गया है।" किन्तु कई ऐसे संघ भी हैं जो सम्बद्ध नहीं हैं।

भारत—भारत में वर्तमान स्थिति यह है कि लोक-सेवक किसी भी ऐसे सेवा संघ में सम्मिलित नहीं हो सकता और न सदस्य ही हो सकता है जिसे अस्तित्व में आने के छह माह के भीतर ही सरकार द्वारा मान्यता प्रदान कर दी गयी हो, या मान्यता देना अस्वीकार कर दिया हो, या मान्यता वापस ले ली हो। इन संघों को मान्यता निम्नलिखित शर्तों के आधार पर दी जाती है—

(अ) कोई ऐसा व्यक्ति जो सरकारी कर्मचारी नहीं है, संघ के मामलों से सम्बन्धित नहीं होना चाहिए;

(आ) संघ के पदाधिकारियों को केवल सदस्यों में से ही नियुक्त किया जाना चाहिए;

(इ) संघ किसी एक ही सरकारी सदस्य के हित का पोषण या समर्थन नहीं करेगा; तथा

(ई) संघ को कोई राजनीतिक निधि नहीं रखनी चाहिए और न किसी राजनीतिक दल या राजनीतिज्ञ के विचारों का प्रचार करना चाहिए। गैर-रेलवे औद्योगिक कर्मचारियों तथा रेलवे कर्मचारियों के सम्बन्ध में (जो केन्द्रीय सरकार के अन्तर्गत कुल कर्मचारियों के 70 प्रतिशत हैं) यह नियम अधिक उदार है। उदाहरण के लिए, उनके संघों को राजनीतिक निधि रखना निषिद्ध नहीं है।

उपर्युक्त वर्णन से स्पष्ट है कि भारत में लोक-सेवकों के संघ बनाने के अधिकार पर कठोर शर्तें लगा दी गयी हैं। इस प्रकार किसी भी अमान्य संघ की सदस्यता अनुशासन सम्बन्धी अपराध माना जाता है। भारत का संविधान सभी नागरिकों को संघ या यूनियन बनाने का अधिकार प्रदान करता है। अतः प्रश्न यह है कि सरकारी कर्मचारियों को इस अधिकार से क्यों वंचित रखा जाय ? उनके विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्रवाई केवल इसी कारण क्यों की जानी चाहिए कि वे ऐसे संघों के सदस्य हैं जिन्हें सरकार द्वारा मान्यता नहीं दी गयी है ? भारत में स्थिति यह है कि सरकार को अपने विवेकानुसार मान्यता देने या न देने की स्वतन्त्रता है। सरकार ने ऐसे संघों की मान्यता को भी वापस ले लिया था जिन्होंने 1960 की हड़ताल में सक्रिय भाग लिया था। कभी-कभी सरकार किसी संघ को इस आधार पर मान्यता देने से इनकार कर सकती है कि उसी वर्ग के कर्मचारियों का एक संघ, जिसकी सदस्य-संख्या अपेक्षाकृत अधिक है, पहले से विद्यमान है। **जगन्नाथदास (द्वितीय वेतन) आयोग** ने इससे सम्बन्धित कठिनाइयों का अनुभव किया था, और सुझाव दिया था कि "किसी अमान्य संघ की सदस्यता मात्र ही अनुशासनात्मक अपराध नहीं होना चाहिए........जहाँ तक संघों की मान्यता का सम्बन्ध है, शासन द्वारा निर्मित तत्सम्बन्धी नियम हमें कुछ कठोर प्रतीत होते हैं। कर्मचारियों के संघ सफलतापूर्वक काम कर सकें, इसके लिए यह आवश्यक है कि मान्यता सम्बन्धी शर्तें युक्तियुक्त होनी चाहिए। अतः हम यह आवश्यक समझते हैं कि मान्यता के नियमों का निर्धारण किया जाना चाहिए और उदारतापूर्वक मान्यता प्रदान की जानी चाहिए।"[1] इन प्रतिबन्धों के होते हुए भी काफी बड़ी संख्या में केन्द्रीय सरकार के कर्मचारी सेवा संघों में संगठित हैं। द्वितीय वेतन आयोग के अनुसार इनकी संख्या 956 है। इनमें से 600 संघों को सरकार ने मान्यता प्रदान नहीं की है और शेष 356 संघों को मान्यता प्राप्त है। सम्भवतः केन्द्रीय सरकार के लगभग आधे कर्मचारी इन संघों या यूनियनों के सदस्य हैं।

हड़ताल का अधिकार (Right of Strike)

लोक कर्मचारियों द्वारा सरकार के विरुद्ध हड़ताल करने या हड़ताल में सहायता पहुँचाने के अधिकार के प्रश्न पर हमारे देश में विचार हुआ है। प्रशासकीय सुधार आयोग ने अपनी रिपोर्ट में, जो 1969 में प्रस्तुत की गयी थी, सरकारी कर्मचारियों की हड़ताल पर कानूनी रोक लगाने की सिफारिश की थी। इस सम्बन्ध में प्रत्येक देश की स्थिति भिन्न है।

ब्रिटेन—ब्रिटेन में ऐसा कोई कानून नहीं है जो लोक कर्मचारियों के प्रदर्शन या हड़ताल करने पर प्रतिबन्ध लगाता हो, या उनका निषेध करता हो। दूसरे शब्दों में, यदि कोई लोक कर्मचारी वहाँ हड़ताल करता है तो वह दण्डनीय अपराध नहीं माना जाता। लेकिन हड़ताल करना अनुशासनात्मक अपराध है, और सरकार

Scanned with CamScanner

हड़ताल की स्थिति में उसके अनुरूप कोई भी अनुशासनात्मक कार्रवाई करने के लिए पूर्ण स्वतन्त्र है। वैसे ब्रिटेन में लोक कर्मचारी न तो हड़ताल करते हैं और न ही हड़ताल करने की धमकी देते हैं।

संयुक्त राज्य अमेरिका—लोक कर्मचारियों का हड़ताल में भाग लेना यहाँ कानून द्वारा निषिद्ध है। श्रम प्रबन्ध सम्बन्ध (टफ्ट हार्टले) अधिनियम, 1947 द्वारा संयुक्त राज्य की सरकार के कर्मचारियों या सरकार के किन्हीं अभिकरणों के कर्मचारियों द्वारा जिनमें सरकारी निगम भी सम्मिलित हैं, सरकार के विरुद्ध हड़ताल करना अवैध घोषित किया गया है। कानून के उल्लंघनकर्ता को दण्डस्वरूप सेवा से पृथक् किया जा सकता है, लोक कर्मचारी का स्तर छीना जा सकता है, और तीन वर्ष पुनः नौकरी करने के अयोग्य घोषित किया जा सकता है। 1955 में 48वीं कांग्रेस द्वारा पारित एक कानून (पब्लिक लॉ-330) द्वारा यह प्रतिबन्ध और भी अधिक कठोर बना दिये गये हैं और यह व्यवस्था की गयी है कि "ऐसा कोई भी व्यक्ति संयुक्त राज्य की सरकार या उसके किसी अभिकरण या सरकार के किसी निगम में कोई पद स्वीकार नहीं करेगा जो किसी हड़ताल में भाग लेता है या संयुक्त राज्य की सरकार या उसके किसी अभिकरण के विरुद्ध हड़ताल करने के अधिकार का दावा करता है, या सरकारी कर्मचारियों के किसी ऐसे संगठन का सदस्य है जो ऐसी हड़ताल करने के अधिकार का दावा करता है।" इस प्रावधान का अतिक्रमण करना घोर अपराध है और इसके लिए आर्थिक दण्ड और/या कैद की सजा दी जा सकती है।

अन्य देश—आस्ट्रेलिया, जापान तथा स्विट्ज़रलैण्ड में सरकारी कर्मचारियों की हड़ताल अवैध है। आस्ट्रेलिया में इस विधि के उल्लंघनकर्ता को दण्डस्वरूप सेवा से तुरन्त हटा दिया जाता है। कनाडा में स्थिति को स्पष्ट नहीं किया गया है। कनाडा की इस व्यवस्था का कि ट्रेड यूनियन विधि संघीय कर्मचारियों पर लागू नहीं होती, यह अर्थ लगाया जा सकता है कि अधिकारों के जिस वैध संरक्षण की गारण्टी श्रमिकों को दी गयी है, वह सरकारी सेवकों को प्राप्त नहीं है। क्यूबेक प्रान्त में सभी परिस्थितियों में सरकारी कर्मचारियों की हड़तालें पूर्णरूपेण निषिद्ध हैं। फ्रांस ही पश्चिमी जगत् का एक ऐसा प्रमुख देश है जो हड़ताल करने के अधिकार की आज्ञा एवं अनुमति देता है।

भारत—भारत की स्थिति ब्रिटेन जैसी है। यहाँ सरकारी कर्मचारियों का हड़ताल करना कानून द्वारा निषिद्ध नहीं है। परन्तु भारत में कर्मचारी द्वारा हड़ताल करना केवल अनुशासन का उल्लंघन मात्र माना जाता है। इस प्रकार, केन्द्रीय लोक सेवा (आचरण) नियम, 1955 द्वारा प्रत्येक सरकारी सेवक को अपनी सेवा की शर्तों सम्बन्धी किसी मामले को लेकर किसी प्रदर्शन में भाग लेने या किसी प्रकार की हड़ताल करने का निषेध किया गया है। यह प्रावधान गैर-औद्योगिक कर्मचारियों पर भी लागू होता है जिनकी संख्या केन्द्रीय सरकार के कर्मचारी-वर्ग की संख्या का लगभग 30% है। फिर भी ऐसे प्रतिबन्ध रेलवे तथा रेलवे कर्मचारियों—औद्योगिक और अनौद्योगिक प्रतिबन्ध को छोड़कर अन्य औद्योगिक कर्मचारियों पर लागू नहीं होते। रेलवे के ऐसे कर्मचारियों की संख्या केन्द्रीय कर्मचारियों की कुल संख्या का 70% है।

यहाँ दो प्रश्न विचारणीय हैं—

(1) क्या सरकारी कर्मचारियों को अपनी सेवा की शर्तों से सम्बन्धित किन्हीं मामलों को लेकर किसी भी प्रदर्शन में भाग लेने या हड़ताल करने के लिए स्वतन्त्र होना चाहिए?

(2) क्या ऐसी हड़तालों पर कोई कानूनी रोक लगायी जानी चाहिए ?

इन प्रश्नों पर विभिन्न विचार प्रकट किये गये हैं, और ऐसा होना स्वाभाविक है। इस सम्बन्ध में तीन दृष्टिकोण हैं। पहला मत इस पक्ष में है कि लोक कर्मचारियों को ट्रेड यूनियनों सम्बन्धी सारे अधिकार प्रदान किये जाने चाहिए जिनमें हड़ताल करने का अधिकार भी सम्मिलित है। दूसरा मत लोक-सेवकों द्वारा की गयी सभी हड़तालों पर पूर्ण रोक लगाने के पक्ष में है। इन दो विरोधी विचारों के मध्य तीसरा दृष्टिकोण है जो कुछ विशेष प्रकार की हड़तालों पर ही प्रतिबन्ध लगाने का समर्थन करता है।

प्रथम मत का समर्थन **डब्ल्यू. एफ. मोशर** (W. F. Mosher) जैसे प्रसिद्ध लेखकों ने किया है। उनके अनुसार, 'लोक सेवा विनियमों द्वारा हड़ताल के निषेध को न तो तर्कशास्त्र और न ही राजनीतिक दर्शन के आधार पर न्यायसंगत ठहराया जा सकता है·······कर्मचारियों के किसी समूह को असहाय परिस्थितियों के

Scanned with CamScanner

की गयी हड़तालों को दण्डित करने का अधिकार दिया गया है तथा निषिद्ध हड़तालों में भाग लेने और उनको प्रोत्साहित करने अथवा आर्थिक सहायता देने वालों को भी दण्डित करने की व्यवस्था की गयी है।"[5]

वार्ता के साधन (Means of Talk)

यदि एक ओर लोक कर्मचारियों को प्रदर्शन या हड़ताल करने का अधिकार नहीं दिया जाता, किन्तु दूसरी ओर उनके प्रति गुलामों जैसे व्यवहार को भी समाप्त करना है, तो सरकार और कर्मचारियों के विवादों को शान्तिपूर्वक अर्थात् समझौते तथा वार्ता द्वारा सुलझाने के लिए आवश्यक उपकरण अनिवार्य है। 'भागीदारी प्रबन्ध' (Participative Management) तथा 'प्रशासन में मानव सम्बन्ध' (Human Relations in Administration) के वर्तमान युग में सरकारी कर्मचारियों को अपनी सेवा-शर्तों से सम्बन्धित मामलों में अपना पक्ष प्रस्तुत करने का अधिकार होना चाहिए।

अब यहाँ ब्रिटेन, संयुक्त राज्य अमेरिका तथा भारत में इस सम्बन्ध में जो स्थिति है, उसका संक्षेप में वर्णन किया जायेगा।

ब्रिटेन

ह्विटलेवाद (Whitleyism) **क्या है ?**—हमारी स्टाफ समितियाँ (परिषदें) ब्रिटेन की ह्विटले परिषदों के नमूने पर आधारित हैं, अतः हमें इन निकायों या संगठनों का संक्षिप्त वर्णन करना आवश्यक है। ह्विटलेवाद विभिन्न तलों पर स्वामी (employer) के रूप में राज्य के प्रतिनिधियों (कर्मचारी-वर्ग पक्ष) के मध्य समय-समय पर होने वाली चर्चा एवं विचार-विमर्श की एक पद्धति है। इसके उद्देश्य ये हैं—(अ) प्रबन्ध तथा कर्मचारी-वर्ग के मध्य इस दृष्टि से पूर्ण सहयोग उत्पन्न करना कि लोक सेवा की कार्यकुशलता में वृद्धि की जा सके तथा कर्मचारियों का हित-साधन हो सके; (आ) शिकायतों को निबटाने के लिए उपयुक्त उपकरण की व्यवस्था करना; तथा (इ) समस्याओं का समाधान करने के लिए विभिन्न लोक-सेवकों के दृष्टिकोणों तथा अनुभवों का प्रयोग करना। **ह्विटलेवाद** एक भावना है जिसके अनुसार संयुक्त चर्चा रूपी उपकरण द्वारा दोनों पक्षों को सन्तोष प्रदान करने वाले मैत्रीपूर्ण समझौते पर पहुँचना चाहिए। ह्विटले परिषदों का प्रारम्भ ब्रिटिश लोक सेवा में 1919 से हुआ है, और लोक सेवा के विभिन्न श्रमिक संघों के नेताओं, वरिष्ठ कोषाधिकारियों तथा सभी विभागीय प्रधानों के मतानुसार यह प्रणाली सफल सिद्ध हुई है।

संगठन—ह्विटले व्यवस्था में लोक सेवा के सामान्य वर्गों की एक राष्ट्रीय ह्विटले परिषद् (National Whitley Council) होती है। प्रत्येक विभाग के कर्मचारियों की भी पृथक्-पृथक् विभागीय परिषदें होती हैं। राष्ट्रीय तथा विभागीय परिषदों के मध्य पद-सोपान परम्परा (hierarchy) का कोई सम्बन्ध नहीं है। लेकिन राष्ट्रीय परिषद् के लिए सभी विभागीय परिषदों को संविधान का अनुमोदन करने का अधिकार है। राष्ट्रीय परिषद् को विभाग के उन कार्यों से सूचित रखा जाता है जो राष्ट्रीय हित के विरुद्ध जान पड़ते हैं, या जिनके परिणाम सम्बन्धित विभाग से पूरे होते हैं। इनके नीचे जिला या प्रादेशिक समितियाँ होती हैं जो देशभर में बिखरे कर्मचारियों की स्थानीय समस्याओं से सम्बन्ध रखती हैं। राष्ट्रीय परिषद् के सदस्यों की कुल संख्या 54 है जो सरकारी तथा कर्मचारी दोनों पक्षों में समान रूप से विभाजित होती है। पहले सरकारी सदस्यों की नियुक्ति मन्त्रिमण्डल द्वारा की जाती थी, किन्तु अब इसके रिक्त स्थानों को कोषागार द्वारा भरा जाता है। सदस्यों को किसी विशेष अवधि के लिए नियुक्त नहीं किया जाता; वे उस समय तक सदस्य बने रहते हैं जब तक वे त्यागपत्र न दे दें या सेवानिवृत्त न हो जायें। सरकारी पक्ष में मुख्यतः विभागों के प्रधान, कुछ थोड़े-से उप-प्रधान तथा निम्न श्रेणी के कोषागार अधिकारी होते हैं। विभागीय प्रतिनिधित्व को समुचित रूप से सन्तुलित करने का प्रयत्न किया जाता है। कोषागार तथा श्रम मन्त्रालय के प्रतिनिधियों के अतिरिक्त अन्य सदस्य वैयक्तिक क्षमता के आधार पर नियुक्त किये जाते हैं। वर्तमान में सेवारत लोक-सेवक ही इसके सदस्य हैं। 1922 से 1930 तक सरकारी पक्ष में सत्ताधारी दल के तीन संसदीय सदस्य थे। लोक सेवा सम्बन्धी शाही आयोग (Royal Commission on the Civil Services, 1929-31) की सिफारिश पर इस व्यवस्था को समाप्त कर दिया गया। कर्मचारियों के पक्ष की नियुक्ति आरम्भ में (1919) कर्मचारियों के संघों के आधार पर बड़े-बड़े समूहों द्वारा की जाती थी। इसके पश्चात् कर्मचारियों के समूहों में परिवर्तन आ गया है। अतः कर्मचारियों के पक्ष की रचना में भी परिवर्तन हो गया है। कर्मचारी पक्ष रिक्त स्थान को भरने तथा समय-समय

Scanned with CamScanner

पर प्रतिनिधित्व के स्थानों की संख्या निश्चित करने के लिए उत्तरदायी है। सदस्यों की नियुक्ति एक वर्ष के लिए होती है और प्रायः बड़े अनुपात में इसके सदस्य कर्मचारी संघों के पूर्णकालिक कर्मचारी होते हैं, शेष सदस्य लोक-सेवक होते हैं। कभी-कभी कर्मचारी-वर्ग के संघों के अधिकारी भी, जो संसद-सदस्य होते हैं, परिषदों में भाग लेते हैं। इसको रोकने के लिए परिषदों के संविधान में कोई व्यवस्था नहीं है। परिषदों का एक सभापति तथा एक उप-सभापति होता है और चार सचिव होते हैं। प्रत्येक पक्ष अपने दो सदस्यों को सचिवों के रूप में काम करने के लिए नियुक्त करता है।

विभागीय परिषद् (Departmental Council) में दोनों पक्षों—सरकारी और कर्मचारी-वर्ग—का प्रतिनिधित्व होता है। सरकारी पक्ष में सामान्यतः सम्बन्धित विभाग के कार्यरत वरिष्ठ श्रेणी के लोक-सेवक होते हैं। इनमें उस विभाग का स्थापना अधिकारी भी होता है। उसकी नियुक्ति मन्त्री या विभाग का प्रधान करता है। विभाग का प्रधान ही प्रायः इसका अध्यक्ष और स्थापना सम्भाग का कोई सदस्य प्रायः सचिव होता है। कर्मचारी के पक्ष में सबसे पहले विभाग में प्रतिनिधित्व पाने वाली सभाओं द्वारा सदस्य नियुक्त किये जाते हैं। विभाग का प्रधान उन्हें इस प्रयोजन के लिए एक साथ बुलाता है और वही यह निश्चय करता है कि समय-समय पर विभिन्न संघों को कितने स्थान प्राप्त होने चाहिए।

कार्यवाई—राष्ट्रीय परिषद् (National Council) की साधारण बैठकें विधान के अनुसार "आवश्यकतानुसार कभी भी बुलायी जा सकती हैं। तीन माह में एक बैठक करना आवश्यक है। सभापति या उप-सभापति द्वारा आवश्यकतानुसार परिषद् का अधिवेशन बुलाया जा सकता है।" फिर भी व्यवहारतः पूरी राष्ट्रीय परिषद् की बैठक शायद ही कभी होती हो। इसके कार्यों का सम्पादन मुख्यतः समितियाँ करती हैं और कर्मचारी-वर्ग तथा सरकारी पक्ष के मुख्य सदस्यों के मध्य आपसी सम्पर्कों द्वारा बहुत-सा कार्य सम्पन्न किया जाता है। सरकारी पक्ष का प्रतिनिधि ही परिषद् या समिति की सभी बैठकों में अध्यक्ष होता है। उपाध्यक्ष कर्मचारी पक्ष का होता है। फलस्वरूप, वह कभी भी अध्यक्ष का आसन ग्रहण नहीं कर सकता। परिषद् या समितियों में जिन प्रश्नों पर पूर्व-चर्चा हो चुकती है उन्हें मतदान द्वारा तय नहीं किया जाता है। प्रत्येक पक्ष औपचारिक रूप में ही बोलता है। सरकारी पक्ष में कोई दरार नहीं होती, अतः वह अविभाजित रहता है। वह सरकार का प्रतिनिधित्व करता है। स्थायी प्रधान तो ऐसा अभिकरण होता है जो सरकार की नीति की घोषणा करता है तथा कर्मचारी पक्ष के साथ उस पर चर्चा करता है। कर्मचारी पक्ष में भी कोई भेद-भाव नहीं होता। अतः परिषद् में कभी कोई मतदान नहीं होता। यदि दोनों पक्ष असहमत हैं तो ह्विटले व्यवस्था के अन्तर्गत निर्णय हो ही नहीं सकता। परिषद् के निर्णय दोनों पक्षों के बीच समझौते द्वारा किये जाते हैं और उन पर अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष द्वारा हस्ताक्षर किया जाना आवश्यक होता है। तत्पश्चात् वे मन्त्रिमण्डल को भेज दिये जाते हैं और मन्त्रिमण्डल की सहमति के पश्चात् ही क्रियान्वित किये जाते हैं। राष्ट्रीय कर्मचारी पक्ष की बैठक नियमपूर्वक महीने में कम से कम एक बार होती है। उनका अपना अलग संविधान एवं अलग स्थायी आदेश होते हैं। इन बैठकों में ही मतदान होते हैं।

विभागीय परिषदों के सम्बन्ध में भी यही स्थिति है। बहुत से विभागों ने युद्ध के दौरान अपनी सभी परिषदों की नियमित बैठकें बुलाना बन्द कर दिया था। बाद में कुछ विभागों ने उन्हें पुनः बुलाना शुरू कर दिया। किन्तु वर्तमान समय में समिति प्रक्रिया अधिक प्रचलित है। अधिकांश बड़े विभागों में शाखा, क्षेत्रीय, स्थानीय या कार्यालय समितियाँ होती हैं जिनमें उन कस्बों या कार्यालयों के कर्मचारी होते हैं। वे विशुद्ध घरेलू मामलों पर ही चर्चा करते हैं। अपनी सभी कार्यवाहियों का विवरण वे मुख्य विभागीय परिषद् या उसकी किसी समिति को पुष्टिकरण के लिए भेजते हैं, यद्यपि विभागीय परिषदों के पुष्टिकरण हेतु उन्हें भेजना आवश्यक नहीं है। इन कार्यालय समितियों का बहुत महत्व है। वे स्थानीय कठिनाइयों को सुगम बनाने में पर्याप्त योग देती हैं, और कर्मचारी वर्ग के समान कष्टों का निबटारा करती हैं। इन समितियों का लक्ष्य सहयोगपूर्वक कार्य करने हेतु अच्छे आधार का निर्माण करना है।

कार्य—राष्ट्रीय परिषद् के क्षेत्र में वे सभी मामले आते हैं जो कर्मचारियों की सेवा की शर्तों को प्रभावित करते हैं। इसके कार्य निम्नवत् हैं :

(1) कर्मचारियों के अनुभव तथा विचारों के उपयोग के लिए सर्वोत्तम साधनों का प्रबन्ध।

Scanned with CamScanner

(2) कर्मचारी जिन परिस्थितियों में काम करते हैं उन परिस्थितियों के निर्धारण में उन्हें अधिक स्थान और उत्तरदायित्व देना तथा तत्सम्बन्धी साधन प्राप्त करना।

(3) उन सामान्य सिद्धान्तों का निश्चय करना जिन पर भर्ती, काम के घण्टे, पदोन्नति, अनुशासन, पदावधि, पारिश्रमिक तथा अधिवार्षिकी जैसी सेवा सम्बन्धी शर्तें आधारित हैं।

राष्ट्रीय परिषद् में पदोन्नति की चर्चा विषय के सामान्य रूप तथा उन सिद्धान्तों तक ही सीमित है जिन पर सामान्य पदोन्नतियाँ निर्भर होती हैं। व्यक्तिगत मामलों पर किन्हीं भी परिस्थितियों में विचार नहीं किया जा सकता।

राष्ट्रीय परिषद् अनुशासनात्मक कार्रवाई से सम्बन्धित सामान्य सिद्धान्तों की चर्चा करने के लिए स्वतन्त्र है, किन्तु वैयक्तिक मामलों पर इसके द्वारा कोई चर्चा नहीं की जा सकती।

(4) लोक-सेवकों को भावी शिक्षा के लिए प्रोत्साहित करना तथा उच्चतर प्रशासन और संगठन में उनके प्रशिक्षण की उपयुक्त व्यवस्था करना।

(5) कार्यालय तन्त्र तथा संगठन का सुधार और इस विषय पर कर्मचारी-वर्ग द्वारा दिये गये सुझावों पर पूर्ण विचार के लिए अवसर की व्यवस्था करना।

(6) सभी प्रस्तावित विधानों पर उस सीमा तक विचार करना जहाँ तक कि वे लोक-सेवकों की नौकरी एवं स्थिति को प्रभावित करते हों।

फिर भी परिषद् के कार्यों के क्षेत्र की निम्नलिखित मर्यादाएँ हैं—

(अ) ह्विटले परिषदों की स्थापना से संसद के प्रति उत्तरदायित्व में सरकार को अंशमात्र भी छुटकारा नहीं मिला है। वह लोक-हित में अपने उत्तरदायित्वों को निभाने तथा अपनी सत्ता का प्रयोग करने में शासन कार्य सम्बन्धी अपनी स्वतन्त्रता को समर्पित नहीं कर सकती। **डगलस हॉटन** के शब्दों में, राष्ट्रीय ह्विटले परिषद् में ऐसे कोई समझौते नहीं होते जिनकी सूचना मन्त्रियों को न दी जाती हो अपितु उसके द्वारा समझौते होने के पूर्व सम्बन्धित मन्त्री ही उन्हें प्राधिकृत करते हैं।

(आ) व्यवहार में, कर्मचारी पक्ष सेवा में सर्वोच्च पदों के क्रम-स्थापन या वेतन की चर्चा ह्विटले परिषदों में करने का प्रयत्न नहीं करता है। ह्विटले परिषदों का सम्बन्ध तो केवल उन पदाधिकारियों से है जो वेतन के रूप में अधिकतम दो हजार पौण्ड प्रति वर्ष प्राप्त करते हैं।

(इ) ह्विटलेवाद का लक्ष्य कर्मचारियों के संघों के साथ सीधी वार्ताओं को निष्प्रभावी करना नहीं है। वास्तव में वर्ग या श्रेणियों के पारिश्रमिक सम्बन्धी प्रश्न बहुधा ह्विटले समितियों में चर्चाओं की अपेक्षा प्रत्यक्ष वार्ता द्वारा ही निबटाये जाते हैं। ह्विटले परिषद् प्रणाली किसी लोक-सेवक संघ पर अपने हितार्थ कोषागार या विभाग के साथ प्रत्यक्ष वार्ता करने पर कोई रोक नहीं लगाती है। किन्तु दो या अधिक संघों के एक जैसे या सम्पूर्ण विभाग से सम्बन्धित मामले केवल ह्विटले परिषद् द्वारा ही निबटाये जाते हैं।

(ई) परिषदों ने अपने आपको प्रायः दाल-रोटी के प्रश्नों तक ही सीमित रखा है। वे प्रशासन सम्बन्धी गम्भीर मामलों में सत्ताधारी कर्मचारियों की सहयोगी अभिकरण नहीं रही हैं और न लोक सेवा के सम्बन्ध में उन्होंने कोई प्रभावशाली भूमिका ही निर्वाह की है। परिषदों ने सामान्यतः प्रशासन की गैर-आर्थिक गम्भीर समस्याओं में भी रुचि नहीं दिखायी है। इस प्रकार सुरक्षा सम्बन्धी उपायों तथा नागरिक अधिकारों से सम्बन्धित नीतियों जैसे मामलों के लिए सरकार उत्तरदायी होती है, और ऐसे मामले ह्विटले परिषदों के अधिकार-क्षेत्र से परे होते हैं। फिर भी ह्विटले परिषदें सरकारी निर्देशों के अधीन इस नीति की व्यावहारिकता की चर्चा कर सकती हैं।

(उ) परिषदें वैयक्तिक मामलों पर विचार नहीं करती हैं और न विशिष्ट मामलों की अच्छाइयों पर ही चर्चा करती हैं। ऐसे मामलों में निहित सिद्धान्तों पर ही उनके द्वारा चर्चा की जाती है।

Scanned with CamScanner

लोक सेवा पंच-निर्णय न्यायाधिकरण (The Civil Services Arbitration Tribunal)—इस न्यायाधिकरण की स्थापना आज से लगभग 35 वर्ष पूर्व सरकारी पक्ष तथा कर्मचारी पक्षों के मध्य हुए एक समझौते के फलस्वरूप हुई थी। इसका एक स्वतन्त्र अध्यक्ष होता है। एक सदस्य को वित्त मन्त्रालय (Chancellor of the Exchequer) का प्रतिनिधित्व करने वाली सूची (panel) में से और दूसरे सदस्य को राष्ट्रीय ह्विटले परिषद् के कर्मचारी-वर्ग पक्ष का प्रतिनिधित्व करने वाली सूची में से चुना जाता है। अध्यक्ष सबकी सहमति से नियुक्त किया जाता है। वह एक प्रसिद्ध अधिवक्ता होता है। अन्य सदस्य श्रम-मन्त्री द्वारा नियुक्त किये जाते हैं। जब किसी मामले की सुनवाई होती है तो न्यायाधिकरण में अध्यक्ष के अलावा प्रत्येक सूची से एक-एक सदस्य ले लिया जाता है। न्यायाधिकरण में असहमति की स्थिति में अध्यक्ष को निर्णायक मत देने का अधिकार है। सेवा सम्बन्धी तीन महत्वपूर्ण विषयों—वेतन, अवकाश तथा कार्य के घण्टे—पर अनिवार्य पंच-निर्णय की व्यवस्था है। इन तीन विषयों में से किसी भी विषय से सम्बन्धित मामले में असहमति की दशा में उसे राष्ट्रीय परिषद् के दोनों पक्षों में से किसी भी एक पक्ष द्वारा न्यायाधिकरण को भेजा जा सकता है। न्यायाधिकरण के किसी भी निर्णय को स्वीकार या अस्वीकार करने का अधिकार संसद को है। किन्तु कुछ मामलों को छोड़कर साधारणतः इस विशेषाधिकार का प्रयोग नहीं किया जाता।

ह्विटले परिषदों की कार्य-प्रणाली—ह्विटले परिषदों की कार्य-प्रणाली की एक विशेषता उसकी औपचारिक भूमिका है। उसकी इस प्रकार की भूमिका का वर्णन **डगलस हॉटन** ने 10 दिसम्बर, 1967 को लोक प्रशासन के भारतीय संस्थान (I.I.P.A.) में व्याख्यान देते हुए इस प्रकार किया था : "ह्विटले परिषद् के दैनिक कार्यों का यदि मैं उल्लेख करूँ तो मुझे यह कहना होगा कि बहुत-सी औपचारिकताएँ समाप्त हो गयी हैं। परिषदों में पर्याप्त अनौपचारिक चर्चा होती है और वास्तविक दृश्य के पीछे खुलकर चर्चा होती है, अर्थात् मेज पर ताश के सभी पत्ते खोल दिये जाते हैं। इसके पश्चात् सरकारी पक्ष के अध्यक्ष को वर्तमान में मुझे या कर्मचारी पक्ष के महासचिव को यह सूचित करने के लिए बुला भेजने में कठिनाई नहीं होती कि किसी विशेष मामले की क्या स्थिति है। वह कह सकता है, "मैं आपको पहले से यह बताये देता हूँ कि निर्णय क्यों लिया गया है, ताकि आप भी इसे खूब अच्छी तरह सोच-विचार लें और जो सूचना मैं आपको दे रहा हूँ उसके लिए हमारी औपचारिक सभा में तैयार होकर आयें। कभी-कभी हम सरकारी पक्ष के साथ पूर्णतः अनौपचारिक ढंग से तथा खुलकर इसलिए बातें करते हैं कि हम उनको समझाकर तैयार कर सकें, या व्यक्तिगत रूप में सर्वोत्तम सूचना उन्हें दे दें। प्रीस्टले आयोग के प्रतिवेदन (Priestley Commission Report) पर हुई वार्ताओं के दौरान हमने बहुत से अनौपचारिक परामर्श किये थे। वस्तुतः हम कार्य को पूरा कराने के लिए हर दूसरे दिन मिलते थे। सरकारी पक्ष की अपनी अलग बैठकें होती थीं, और हम लोग अपनी बैठकें अलग किया करते थे। फिर तीसरे पहर या प्रातः हम लोग एक साथ मिलकर अनौपचारिक बैठकें करते थे ताकि दूसरे दिन होने वाली औपचारिक सभा में हमें भलीभाँति स्पष्ट रहे कि प्रत्येक पक्ष की स्थिति क्या है; और इस प्रकार हमें अधिक समय व्यर्थ ही हवा में हाथ-पैर मारने में नहीं गँवाना पड़ता था। सरकारी पक्ष द्वारा अपना बयान देने तक हमें यह अनुमान हो जाता है कि इसके पीछे क्या है और पैंतरेबाजी के लिए कहाँ तक गुंजाइश है। सरकारी पक्ष यह कहता है कि 'हम आपके प्रस्तावों को स्वीकार नहीं कर सकते, और समझौते सम्बन्धी सुझाव रखना हमारा काम नहीं है। यदि आप मामले पर जोर डाल रहे हैं और अपने प्रस्तावों में संशोधन कर सकते हैं तो हम काम की वार्ता आगे बढ़ा सकते हैं।' शब्द 'काम की वार्ता' हमारे अनौपचारिक सम्पर्कों में बहुधा प्रयुक्त होता रहता है। इसका कारण यह है कि हम सभी वास्तव में काम करना चाहते हैं, और हम वह आधार ढूँढ़ने का प्रयत्न करते रहते हैं जिस पर कार्य किया जा सके। कोरी चर्चा के लिए ही चर्चा करके हमें सन्तोष नहीं हो जाता। कभी-कभी तो बातें लेखबद्ध करनी पड़ती हैं, क्योंकि सदस्यगण यह जानना चाहते हैं कि उनकी ओर से क्या बातें हो रही हैं। किन्तु अनौपचारिक बातचीत गुप्त रहती है, और वह समझौता कराने का एक साधन है। अभिलेख तो केवल वार्ताओं के अधिक औपचारिक पक्ष पर ही प्रकाश डालते हैं, और इसमें आश्चर्य की बात भी नहीं है। शासन के बाहर ट्रेड यूनियनों तथा मालिकों द्वारा भी 'अभिलेख से दूर' प्रणाली को अपनाया जाता है।

दूसरी विशेषता यह है कि सरकारी पक्ष को यह चिन्ता लगी रहती है कि वे किस प्रकार कर्मचारी-वर्ग को सन्तुष्ट करें कि उनके साथ वास्तव में न्याय किया गया है। यद्यपि व्यवहार में परिषदें व्यक्तिगत मामलों पर चर्चा करने से दूर रहती हैं, किन्तु उनका सरकारी पक्ष व्यक्तिगत मामलों के औचित्य की चर्चा करने को तैयार रहता है। वह भी केवल इसलिए कि वे कर्मचारी वर्ग के प्रतिनिधियों को सन्तोष दिला सकें कि उचित

Scanned with CamScanner

निर्णय हुए हैं। अन्त में, कर्मचारी-वर्ग ने भी बड़े उत्तरदायित्वपूर्ण, रचनात्मक तथा सहयोगी भाव से कार्य किया है। **हॉटन** के शब्दों में, "वास्तव में मानवीय सम्बन्धों में यह एक ऐसा अध्ययन है जिसमें प्रत्येक पक्ष का कुछ योगदान है और प्रत्येक पक्ष कुछ न कुछ लाभान्वित हुआ है।"

संयुक्त राज्य अमेरिका

संयुक्त राज्य अमेरिका में इंग्लैण्ड की ह्विटले परिषद् जैसी कोई व्यवस्था नहीं है। सरकार और कर्मचारियों के बीच वार्ताएँ करने के लिए वहाँ संस्थागत युक्ति की कोई व्यवस्था नहीं की गयी है। फिर भी, अन्य तरीकों से मालिकों और कर्मचारियों के बीच सहयोग बढ़ाने के प्रयास किये गये हैं। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए संगठित कर्मचारी संघों के प्रतिनिधियों से यह आग्रह किया जाता है कि वे सेवीवर्ग सम्बन्धी नीतियों के सम्बन्ध में कर्मचारियों के सामान्य हित से सम्बन्धित अपने विचारों को अधिकारियों के समक्ष विचारार्थ प्रस्तुत करें। ये रीतियाँ तथा प्रक्रियाएँ निरन्तर प्रकाशित की जाती हैं और सभी कर्मचारी संघों को भेजी भी जाती हैं।

व्यवहार में 'कर्मचारी संघों' को ऐसे किसी भी नियम-विनियम, प्रशासकीय अनुदेश, या विभिन्न संस्थाओं में सेवायोजन को प्रभावित करने वाले कार्यों के सम्बन्ध में सिफारिश तथा प्रस्ताव करने की सुविधा दी गयी है। मालिकों द्वारा ऐसी सिफारिशों की उपेक्षा नहीं की जाती। ऐसे प्रस्तावों पर सावधानी के साथ विचार किया जाता है और जब मामले पर पूर्णतः विचार हो चुकता है तो उस पर आवश्यक कार्रवाई की जाती है।

मालिक और कर्मचारियों के बीच सहयोगी सम्बन्ध रखने वाले विनियम भी कर्मचारी समूह के साथ, काम करने के नियमित घण्टों के मध्य जो दोनों के लिए सुविधाजनक हों, अनौपचारिक परामर्श करने पर बल देते हैं। चर्चा किये जाने वाले विषय एवं उनकी प्रकृति पहले से ही बता दी जाती है।

सामान्यतः केवल उन्हीं प्रस्तावों पर विचार किया जाता है जिनका प्रभाव समग्र रूप में कर्मचारियों पर पड़ता है। किन्तु इसका तात्पर्य यह नहीं है कि वैयक्तिक कष्टों से सम्बन्धित प्रस्तावों पर विचार ही नहीं किया जाता। शिकायतें दूर करने का कोई अन्य साधन विद्यमान होने के कारण वैयक्तिक हितों से सम्बन्धित मामलों की उपेक्षा नहीं की जाती है।

कर्मचारियों के विभिन्न प्रवर्गों के हितों का प्रतिनिधित्व करने के लिए चुने गये सदस्य प्रायः प्रत्येक प्रवर्ग के संगठित कर्मचारी समूहों में से ही चुने जाते हैं। यह भी होता है कि सुरक्षा की दृष्टि से सम्बन्धित विभाग किसी संगठित कर्मचारी समूह के किसी प्रतिनिधि को परिषद् में प्रतिनिधित्व से पृथक् भी कर सकता है। यह माना जाता है कि सुरक्षा के कारण ऐसे मामलों में निष्कासन आवश्यक होता है जो अभिकरण के कार्य-संचालन सम्बन्धी विवरणों या अभिलेखों से सम्बन्धित सूचना से सम्बन्धित होते हैं। यही नहीं, ऐसी किसी सूचना को उन लोगों के समक्ष प्रकट करना विधि-विरुद्ध है जो इस प्रकार निष्कासित नहीं किये गये हों।

कर्मचारियों के प्रतिनिधित्व हेतु सामान्यतः यह व्यवस्था है कि अवर्गीकृत कर्मचारियों का प्रतिनिधित्व वर्ग, शिल्प, प्रशासकीय सम्भाग, उपभाग या किसी ब्यूरो की अन्य उपयुक्त सेवायोजन इकाई द्वारा होना चाहिए। प्रशासन, अभिकरण, निगम, विभाग के संस्थापन सम्भाग या संस्था को उस संगठन को नामजद करने का अधिकार है जो नीति के अनुसार ऐसे सभी कर्मचारियों का प्रतिनिधित्व करे। इस प्रकार नामजद किये गये संगठन तत्सम्बन्धी सभी कर्मचारियों के तब तक प्रतिनिधि माने जाते हैं जब तक वेतन की दरों, घण्टों के विनियमन, कार्य के नियमों तथा अन्तरों के समायोजन या ऐसी संयुक्त क्रियाओं को उन्नत करने के तरीकों या मतभेदों के समायोजन, जैसे कर्मचारी प्रशिक्षण, द्विगुणन को रोकने तथा श्रम के प्रबन्ध में सहयोग या वेतनों की दरों को निश्चित करने वाली अनुसूचियाँ, काम के घण्टे निश्चित करने वाले नियम तथा विनियम, कार्य-प्रणालियों को निश्चित करने वाले लिखित समझौते आदि लागू किये जाते हैं। स्मरणीय है कि कर्मचारियों से समझौते की शर्तों के सम्बन्ध में अपना दृष्टिकोण प्रकट करने का आग्रह करने पर अलग-अलग सुनवाई नहीं की जाती है।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि संघीय सेवा में संघीय प्रबन्ध सम्बन्धों के विषय में विद्यमान रीति निजी उद्यमों की रीति से भिन्न है। संघीय कर्मचारियों को सरकार के विरुद्ध हड़ताल का आश्रय लेना कानून द्वारा

Scanned with CamScanner

निषिद्ध है। उन पर यह प्रतिबन्ध लगा दिया गया है कि वे ऐसे संघ का सदस्य नहीं बन सकते जो हड़ताल करने के अधिकार का समर्थन करता हो। स्मरणीय है कि ऐसा कोई कानून निजी क्षेत्र के कर्मचारियों की स्वतन्त्रता का हनन नहीं करता है।

जहाँ तक संघीय प्रबन्ध का प्रश्न है, प्रत्येक अभिकरण यह निश्चय करने के लिए स्वतन्त्र है कि कौन से सम्बन्ध उसके विशिष्ट क्रियाकलापों के लिए सबसे अधिक उपयुक्त होंगे। उदाहरण के लिए, टेनेसी घाटी प्राधिकरण (Tennesse Valley Authority) तथा बॉर्नेविले विद्युत प्रशासन (Borneville Power Administration) नियमित रूप से कर्मचारी संघों के साथ मजदूरी, अवकाश, वरिष्ठता, शिकायतों तथा कार्य करने की शर्तों पर परामर्श करते रहते हैं। लेकिन सभी मालिकों ने इस औपचारिक कार्यप्रणाली को नहीं अपनाया है। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि संयुक्त राज्य अमेरिका की प्रतिनिधि सभा (House of Representatives) भी इन मामलों में पर्याप्त रुचि लेती है। वह सेवीवर्ग सम्बन्धी विधानों का प्रस्ताव करने वाले संघों का दृष्टिकोण जानने का प्रयास करती है। लोक सेवा आयोग ने भी सेवीवर्ग कार्यक्रम तथा नीतियों के निर्धारण में इसी प्रणाली को अपनाया है।

सरकारी कर्मचारियों के संघों का उद्देश्य संघीय कर्मचारियों के कार्य करने की परिस्थितियों तथा वेतन में सुधार करना तथा कर्मचारी के अन्य हितों (जैसे, सेवानिवृत्ति अधिसमय तथा अवकाश सम्बन्धी नियम) को आगे बढ़ाना है। उन्हें औद्योगिक संघों की भाँति सरकार के विरुद्ध हड़ताल करने का अधिकार प्राप्त नहीं है। यही दोनों में प्रमुख अन्तर है। 84वीं कांग्रेस द्वारा पारित निषेधाज्ञा पब्लिक लॉ-330 (PL-330) द्वारा स्थापित व्यवस्था निम्नवत् है—

"ऐसा कोई भी व्यक्ति संयुक्त राज्य की सरकार में या उसके किसी अभिकरण में—सरकार के पूर्ण स्वामित्व वाले निगम भी इसमें सम्मिलित हैं—कोई भी पद या नौकरी स्वीकार या ग्रहण नहीं करेगा, जो—

(1) संयुक्त राज्य में हमारी सरकार के संवैधानिक रूप को उलटने का समर्थन करता हो;
(2) ऐसे संगठन का यह जानते हुए भी सदस्य हो कि वह संगठन संयुक्त राज्य सरकार के संवैधानिक स्वरूप को उलटने का समर्थन करता है;
(3) जो किसी हड़ताल में भाग लेता हो या संयुक्त राज्य सरकार या उसके किसी अभिकरण के विरुद्ध हड़ताल करने के अधिकार की अभिपुष्टि करता हो; या
(4) ऐसे संगठन का यह जानते हुए भी सदस्य हो कि सरकारी कर्मचारियों का वह संगठन संयुक्त राज्य सरकार या उसके अभिकरण के विरुद्ध हड़ताल करने के अधिकार की अभिपुष्टि करता है।"

कर्मचारी संघों ने अपने उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए विभिन्न साधन अपनाये हैं। इनमें से कुछ साधनों का उल्लेख निम्नवत् है—

(1) वे नवनिर्मित कानूनों में कांग्रेस से प्रार्थना करके परिवर्तन करा सकते हैं;
(2) वे राष्ट्रपति या निष्पादक अभिकरणों से सीधे अपील कर सकते हैं;
(3) वे अपने संघ की पत्रिकाओं के माध्यम से तथा संघ के विद्यालय की स्थापना करके अपने विचारों का प्रकाशन या प्रचार कर सकते हैं।

कर्मचारियों के कई सरकारी संघ हैं। कर्मचारीगण इन संघों में सम्मिलित हो सकते हैं। लोक सेवा आयोग का इन संघों से कोई शासकीय सम्बन्ध नहीं है। ऐसे संगठन ही कर्मचारियों के विचारों की संयुक्त अभिव्यक्ति के एकमात्र विद्यमान साधन हैं। अतः सेवीवर्ग सम्बन्धी प्रस्तावों तथा समस्याओं के सम्बन्ध में इनसे बहुधा परामर्श लिया जाता है।

भारत

प्रथम वेतन आयोग (वरदाचारियर आयोग) से 1946 में विशेष रूप से सेवा की परिस्थितियों सम्बन्धी प्रश्नों एवं विवादों को तय करने के लिए उपयुक्त साधनों के बारे में अपने प्रतिवेदन में सुझाव देने का आग्रह किया गया था। इसका कारण यह था कि सरकार और उसके कर्मचारियों के बीच उत्पन्न मतभेदों का समाधान

Scanned with CamScanner

सुशासन के लिए आवश्यक होता है। 1947 में आयोग ने अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया था। इसमें आयोग ने निम्नलिखित शब्दों में इस समस्या के बारे में अपना मत प्रकट किया था—"सरकार को यह समझना चाहिए कि उसे अपने कर्मचारियों को यह विश्वास दिलाना आवश्यक है कि उनकी शिकायतों पर तुरन्त यथोचित विचार किया जायेगा। इस बात पर विशेष बल हम इस कारण दे रहे हैं कि हमारे सामने जो साक्ष्य है उससे यह प्रकट होता है कि अधिकांश वर्गों के लोक कर्मचारियों में इस बात के प्रति निराशा ही नहीं अपितु अविश्वास की पूर्ण भावना व्याप्त है कि उनकी शिकायतों पर सरकार द्वारा शायद ही कभी ध्यान दिया जाता हो।" आयोग का यह निष्कर्ष है कि ऐसा कोई साधन होना चाहिए जो "कर्मचारी वर्ग तथा सरकार के मध्य सहयोग, परामर्श, चर्चा तथा वार्ता की व्यवस्था कर सके।" आयोग का यह भी मत था कि यह सोचना गलत है कि ह्विटले प्रणाली जैसी कोई प्रणाली लाभकारी ढंग से भारत में लागू नहीं की जा सकती। फलस्वरूप, प्रथम श्रेणी के कर्मचारियों को छोड़कर उन्होंने सरकारी कर्मचारियों के लिए ह्विटले परिषदों के आधार पर संयुक्त परिषदों की स्थापना की सिफारिश की थी। आयोग ने इससे भी अधिक व्यावहारिक एवं प्रामाणिक मतों पर आधारित चार मुख्य सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया था—(अ) राज्य तथा उसके कर्मचारियों के बीच भेदभाव के समायोजन का सर्वोत्तम मार्ग यह है कि ऐसे मतभेदों को झगड़े का रूप धारण करने से रोका जाये; (आ) यदि कोई प्रश्न झगड़े का रूप धारण कर लेता है, तो दोनों पक्षों के मध्य वार्ता द्वारा ही उसे निबटाना चाहिए; (इ) फिर भी, यदि किसी बाहरी सहायता की आवश्यकता प्रतीत हो तो वह अधिनिर्णय की अपेक्षा मध्यस्थता तथा परामर्श ही होनी चाहिए; और अन्त में (ई) यदि परामर्श के सभी प्रयास असफल हो जायें तो स्वेच्छित समझौते द्वारा अधिनिर्णय की व्यवस्था करनी चाहिए। इस सम्बन्ध में कोई निश्चित व्यवस्था नहीं होनी चाहिए।

द्वितीय वेतन आयोग (जगन्नाथदास आयोग) ने भी उपयुक्त वार्ता तन्त्र (negotiating machinery) की स्थापना करने के लिए निम्नलिखित शब्दों में सबल तर्क दिया है—

"हमारा मत है कि सरकार और उसके कर्मचारियों के मध्य परस्पर सम्बन्धों का एक दूसरा तथा समान महत्वपूर्ण पहलू भी है। निःसन्देह सरकार लाभ की प्रेरणा से प्रेरित नहीं होती है, और सरकार के औद्योगिक तथा व्यापारिक उद्यमों में भी लाभ की प्रेरणा लोक-हित की व्यापक धारणा के अधीन होती है, किन्तु करों को कम करने एवं शासकीय व्यय में मितव्ययता हेतु समाज का दबाव कभी-कभी ऐसी भावना उत्पन्न कर देता है जिसके फलस्वरूप गैर-शासकीय कर्मचारियों में पायी जाने वाली लाभ की भावना (सरकारी कर्मचारियों में भी) उत्पन्न हो जाती है। यद्यपि दोनों में प्रेरणा का कारण परस्पर विपरीत हो सकता है लेकिन दोनों के अन्तिम परिणाम एक जैसे ही होते हैं, अर्थात् पारिश्रमिक-वृद्धि की न्यायपूर्ण माँगों या सेवा की दशाओं को उन्नत करने की उचित माँगों का प्रतिरोध। केन्द्रीय सरकार व्यापार तथा उद्योग के कार्य अपने हाथ में लेती जा रही है। यह दूसरा ऐसा तत्व है जो उसके अधिकांश कर्मचारियों की दृष्टि में सेवायोजक के रूप में शासन तथा अन्य सेवायोजनों के मध्य भेद को अस्पष्ट कर देता है। ऐसी परिस्थितियों में यह प्रस्ताव कि सरकारी सेवकों को हड़ताल का मार्ग नहीं अपनाना चाहिए, एक न्यायपूर्ण आधार प्राप्त करता है। यदि उस प्रस्ताव के प्रति कर्मचारियों का समर्थन प्राप्त करना है तो वार्ता के मार्ग में उत्पन्न अवरोधों को दूर करने तथा झगड़ों को निबटाने के लिए उपयुक्त तन्त्र की स्थापना करना आवश्यक है। भविष्य में पंच-निर्णय न्यायाधिकरण का प्रबन्ध होना चाहिए ताकि पारिश्रमिक या सेवा सम्बन्धी अन्य कोई महत्वपूर्ण शर्त (जैसे, अवकाश तथा काम करने के घण्टे से सम्बन्धित प्रश्न) यदि सुलझ न पाये तो पंच-निर्णय द्वारा उसे तय किया जा सके। यही एकमात्र मार्ग है जिसके द्वारा सरकार अपने कर्मचारियों के प्रति अपने उत्तरदायित्व का निर्वाह कर सकती है। सरकार का यह दायित्व इसलिए है कि वह कर्मचारियों से यह सदैव माँग करती रहती है कि वे अपने श्रम को रोकने (हड़ताल) के अधिकार का परित्याग कर दें। यदि यह बात लोक-हित में है कि सरकारी सेवक ऐसा कोई हथियार प्रयोग में न लायें, जो अन्य कर्मचारियों के लिए सेवायोजन की सन्तोषजनक शर्तें तथा उचित पारिश्रमिक प्राप्त करने में एक प्रभावशाली यन्त्र के रूप में काम देता हो, तो यह बात भी न्यायपूर्ण है कि सरकारी सेवकों को न्यायपूर्ण व्यवहार प्राप्त हो सके, इस हेतु भी कोई अन्य प्रबन्ध होना चाहिए। यदि लोक सेवा से हड़तालों और प्रदर्शनों को समाप्त किया जा सकता है और व्यवस्थित तरीकों से लोक-सेवकों के प्रति

Scanned with CamScanner

उचित व्यवहार किया जा सकता है, तो उसके कष्टों को दूर करने के लिए किसी उपयुक्त साधन का जिसमें अनिवार्य पंच-निर्णय सम्मिलित है, प्रयोग किया जाना असंगत नहीं होगा।"

कर्मचारी वर्ग समितियाँ (परिषदें)—प्रथम वेतन आयोग के प्रतिवेदन में शीघ्र कार्यवाही पर बल दिये जाने की सिफारिशों के बावजूद पूरे सात वर्षों तक संयुक्त परिषदों की स्थापना से सम्बन्धित उसकी सिफारिशों को कार्यान्वित करने की दिशा में कोई कार्यवाही नहीं की गयी थी। इसका कारण यह बताया गया कि केन्द्रीय सचिवालय की सेवाओं की संरचना में होने वाले परिवर्तनों को दृष्टिगत रखते हुए ऐसी परिषदों की रचना के लिए अभी उपयुक्त समय नहीं आया था। 1954 में गृह मन्त्रालय ने यह कार्य अपने हाथ में लिया। उसने जुलाई 1954 में एक गश्ती पत्र द्वारा कर्मचारियों की समितियों की स्थापना के लिए सभी मन्त्रालयों पर दबाव डाला। मन्त्रिमण्डल द्वारा अनुमोदित अनुदेशों की प्रतियाँ भी कार्यालयों को ज्ञापन के साथ भेजी गयी थीं, जिनमें कर्मचारी-वर्ग की समितियों की प्रवृत्ति तथा उनके संविधान का उल्लेख किया गया था। मन्त्रालयों को यह अधिकार दिया गया था कि वे विशेष मामलों या किन्हीं विशेष परिस्थितियों में इस सम्बन्ध में छोटे-मोटे आवश्यक संशोधन कर सकते थे। 1957 में अगला कदम उठाया गया और गृह मन्त्रालय द्वारा कर्मचारियों की समितियों का नाम बदलकर कर्मचारी परिषदें कर दिया गया। इसके अतिरिक्त, प्रत्येक मन्त्रालय के साथ ब्रिटिश प्रणाली के ढंग पर कल्याण अधिकारी (Welfare Officers) भी संलग्न कर दिये गये। सामाजिक क्रियाओं का संगठन, गोष्ठियाँ, मनोरंजन केन्द्र, आभ्यान्तर और बाह्य खेल, कार्यालयों में अल्पाहार गृहों का प्रबन्ध, कार्य करने की दशाओं तथा अस्वास्थ्यकारी अवस्था में सुधार, सरकारी सेवकों को सहायक स्वास्थ्य योजना के सम्बन्ध में सहायता देना, यातायात, बच्चों की शिक्षा, सेवानिवृत्ति-वेतन, उत्पादन इत्यादि कल्याण अधिकारियों के व्यापक कर्तव्य हैं। कुल मिलाकर नवीन वार्ता-तन्त्र निर्बल एवं प्रभावहीन था।

कर्मचारी वर्ग समितियाँ (1954-57) कोई प्रभाव डालने में असफल रही थीं। उनके अस्तित्व का पता तो बाहर के कुछ लोगों को 1957 में डाक-तार विभाग की हड़ताल की धमकी के समय ही हुआ था। द्वितीय वेतन आयोग ने भी इन परिषदों के कार्यों की समीक्षा की है और उन्हें असन्तोषजनक पाया है—

"हमारे सामने जो साक्ष्य है उससे प्रकट होता है कि वर्तमान स्थिति के प्रति बहुत असन्तोष व्याप्त है। कर्मचारी संगठन द्वारा विद्यमान मशीनरी की आलोचना सामान्यतः इस प्रकार थी—'झगड़ों को रोकने के लिए प्रभावशाली साधन के रूप में संयुक्त परामर्श के सिद्धान्त' को स्वीकार करने की शासन की इच्छा नहीं थी, और जिन स्थानों पर इस मशीनरी के विषय में भली-भाँति विचार किया जा चुका था वहाँ भी कुशलतापूर्वक कार्य नहीं किया गया; बैठकें नियमित रूप से नहीं बुलायी गयीं। कुछ अधिकारियों का इन मशीनरियों के प्रति, जिनके साथ उन्हें कार्य करना था, रुख ठीक नहीं था। कर्मचारियों के कुछ संघों ने खेद के साथ यह कहा है कि इस सम्बन्ध में सरकार ने वरदाचारियर आयोग की सिफारिशें स्वीकार नहीं की हैं; और जब उन्होंने यह प्रस्ताव किया कि वर्तमान स्थिति में ऐसी मशीनरी की स्थापना आवश्यक है जो आत्मा और स्वरूप में पूर्णतः ग्रेट ब्रिटेन में विद्यमान ह्विटले तन्त्र जैसी होनी चाहिए, तो हमें ऐसा लगता है कि उन्होंने हमारे सामने कर्मचारियों के संगठनों में फैली सामान्य भावना को अपनाया है। कर्मचारी-वर्ग के कुछ संघ तो यह चाहते थे कि प्रशासकीय विधाओं तथा प्रबन्ध में कर्मचारी-वर्ग अधिक भाग लें; साथ ही पदोन्नति द्वारा अनुशासन सम्बन्धी मामलों में भी उन्हें बोलने का अधिकार होना चाहिए। परामर्श, वार्ता तथा झगड़ों के निबटारे के लिए एक स्थायी तन्त्र का समर्थन किया है, वस्तुतः केवल कुछ ही लोगों ने इसका विरोध किया है।"

कर्मचारी परिषदों की कार्य-पद्धति का अध्ययन करने से सम्बन्धित निम्न सीमाएँ प्रकट होती हैं—

(1) परिषदों की सिफारिशों को अनेक मामलों में स्वीकार किया गया है, यद्यपि ये मामले अपेक्षाकृत कम महत्व के हैं। परिषदें कार्यालय के भीतर कार्य-परिस्थितियों को सुधारने में सफल रही हैं। उदाहरण के लिए, ग्रीष्म ऋतु में पीने के लिए ठण्डे पानी का प्रबन्ध किया गया है, स्वल्पाहार सुविधाओं में सुधार किया गया है, चिकित्सा सम्बन्धी सहायता के लिए और अधिक औषधालय खोलकर एवं मन्त्रालयों इत्यादि में प्रारम्भिक उपचार की पेटियों का प्रबन्ध करके चिकित्सा सम्बन्धी सुविधाएँ बढ़ा दी गयी हैं। इसके अतिरिक्त, परिवहन की सुविधाएँ, अवकाश की स्वीकृति, कार्यालयों की वर्दी इत्यादि से सम्बन्धित अनेक सिफारिशों को क्रियान्वित किया गया

Scanned with CamScanner

है। पदों का वर्गीकरण, पदोन्नति तथा वरिष्ठता सूची तैयार करने जैसे मामलों को प्रभावित करने में ये परिषदें सफल नहीं हुई हैं। जिन मामलों का सम्बन्ध पदोन्नति, भर्ती, कार्य के घण्टों, पदावधि तथा पारिश्रमिक आदि से होता है, उनका सरकारी स्तर पर ही निश्चय किया जाता है। कर्मचारियों को तो इन पर केवल चर्चा की ही अनुमति प्राप्त है।

(2) अधिकारियों का रुख ह्विटले भावना का विकास करने में सहायक नहीं हुआ है। एक मनोवैज्ञानिक खाई आज भी दोनों पक्षों को पृथक् किये हुए है। अधिकारीगण अपने अधीनस्थों के प्रति एक प्रकार की दया दिखाने जैसी प्रवृत्ति को प्रकट करते हैं तथा कर्मचारियों में भी स्वतन्त्रतापूर्वक चर्चाओं में भाग लेने की क्षमता नहीं होती है।

(3) कर्मचारी वर्ग परिषद् की बैठकें नियमित रूप से नहीं होती हैं।

(4) परिषदों की सिफारिशों पर तुरन्त ध्यान नहीं दिया जाता है।

संक्षेप में, कर्मचारी-वर्ग परिषदें भले ही ब्रिटिश ह्विटले प्रणाली पर आधारित हों किन्तु उनमें ह्विटलेवाद की आत्मा और स्वरूप का अभाव है। अतः कर्मचारी-वर्ग परिषदों की वर्तमान स्थिति यह है कि विभिन्न मन्त्रालयों में केवल अलग-अलग सत्ता मात्र हैं। उनमें ब्रिटेन की राष्ट्रीय ह्विटले परिषद् जैसे राष्ट्रीय संगठन का अभाव है। समन्वय समिति केवल कुछ मन्त्रालयों के विवादपूर्ण मामलों को निबटाने का ही काम करती है। कर्मचारी संघों को परिषदों में प्रतिनिधित्व भी नहीं दिया गया है, जबकि ब्रिटेन में ह्विटलेवाद की सफलता का मुख्य कारण कर्मचारी संघों तथा परिषदों के बीच निकट सम्बन्ध है। जहाँ तक सरकारी पक्ष को अनुप्राणित करने वाली भावना का सम्बन्ध है, द्वितीय वेतन आयोग ने बड़ी तत्परता से यह मत व्यक्त किया है कि विवादों को रोकने के लिए संयुक्त परामर्श ही एक प्रभावशाली साधन सिद्ध हो सकता है। लेकिन सरकार इसे स्वीकार करने की इच्छुक प्रतीत नहीं होती।

आयोग ने परिषदों के कार्य को सुधारने के लिए निम्नलिखित सुझाव दिये हैं—

(1) औद्योगिक तथा अनौद्योगिक दोनों प्रकार की लोक सेवाओं के लिए एक केन्द्रीय संयुक्त परिषद् स्थापित की जाय।

(2) वेतन, कार्य के घण्टे, अवकाश आदि विषयों को तय करने के लिए अनिवार्य पंच-निर्णय न्यायाधिकरण की स्थापना की जाय।

(3) कर्मचारी सम्बन्धी महत्वपूर्ण मामलों में श्रम मन्त्रालय से निकट के सम्बन्ध होने चाहिए।

संयुक्त वार्ता तन्त्र

10 अक्टूबर, 1960 को भारत सरकार ने कर्मचारी परिषदों को ह्विटले परिषदों के धरातल पर लाने के लिए एक योजना प्रकाशित की थी। इसकी मुख्य विशेषताएँ हैं : एक त्रिस्तरीय तन्त्र की स्थापना की जानी चाहिए जिसमें स्थानीय या क्षेत्रीय परिषदें, विभागीय परिषदें तथा राष्ट्रीय परिषद् शामिल हों। स्थानीय या क्षेत्रीय परिषदों को केवल उन विषयों का निरीक्षण करना चाहिए जो किसी विशेष क्षेत्र या प्रदेश में स्थित सरकारी कार्यालयों से सम्बन्धित हों। विभागीय परिषदों को किसी विशेष विभाग से सम्बन्ध रखने वाले विषयों पर ही विचार करने के अधिकार हैं, तथा प्रत्येक मन्त्रालय में एक ऐसी परिषद् होनी चाहिए। राष्ट्रीय परिषद् को केवल उन विषयों पर ही विचार करना चाहिए जो कर्मचारियों के कार्य करने की परिस्थितियों एवं अवस्था से सम्बन्धित हों और उसे सामान्य कल्याण सम्बन्धी योजनाओं की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए। एक पंचनिर्णय समिति (Arbitration Committee) की व्यवस्था की गयी है जिसमें सरकार तथा कर्मचारियों का एक-एक प्रतिनिधि होता है। ये प्रतिनिधि दोनों दलों द्वारा अलग-अलग प्रमुख नामों की तालिका से चुने जाने चाहिए। जिन क्विादों को राष्ट्रीय परिषद् तय नहीं कर पाती है वे समिति को निर्देशित कर दिये जाते हैं। सितम्बर 1963 में सरकार ने शासकीय आदेश द्वारा इन निकायों की स्थापना का निश्चय किया था, बशर्ते कर्मचारी हड़तालों से दूर रहें। इस योजना के अन्तर्गत केन्द्रीय सरकार के अनौद्योगिक तथा औद्योगिक लोक कर्मचारी आ जाते हैं, जो प्रथम श्रेणी एवं केन्द्रीय सचिवालयीय सेवा के अतिरिक्त द्वितीय श्रेणी की सेवाओं, मुख्यतः छोटे कार्यों, अन्य समानान्तर सेवाओं और औद्योगिक संस्थाओं के प्रबन्धकीय,

Scanned with CamScanner

प्रशासकीय एवं परिनिरीक्षक कर्मचारियों के अतिरिक्त होते हैं। इसमें पुलिस एवं रेलवे सुरक्षा बल के दस्ते सम्मिलित नहीं हैं।

केन्द्रीय सरकार के कर्मचारियों के लिए संयुक्त वार्ता तन्त्र (Joint Consultative Machinery) तथा अनिवार्य पंचनिर्णय (Compulsory Arbitration) की योजना अक्टूबर 1966 से प्रारम्भ की गयी है। इसके उद्देश्य निम्नवत् हैं—

(1) शासन और उसके कर्मचारियों में सद्भावपूर्ण सम्बन्ध उत्पन्न करना;

(2) शासन और अपने कर्मचारियों के सामान्य निकाय के मामलों में सामान्य महत्व के प्रश्नों पर सहयोग बढ़ाना; तथा

(3) लोक सेवाओं में क्षमता की वृद्धि करना।

संयुक्त वार्ता तन्त्र में सेवा और कार्य की परिस्थितियों, कर्मचारियों के कल्याण, क्षमता एवं कार्य के स्तर का विकास तथा भर्ती, पदोन्नति तथा अनुशासन सम्बन्धी सामान्य सिद्धान्तों पर विचार-विमर्श होता है। व्यक्तिगत मामलों पर इसमें विचार नहीं होता। संयुक्त वार्ता तन्त्र में एक राष्ट्रीय परिषद्, विभागीय परिषद् तथा क्षेत्रीय और कार्यालय की परिषदें होती हैं। संयुक्त वार्ता तन्त्र त्रिस्तरीय व्यवस्था है, और इसका प्रत्येक स्तर संगठन और कार्य की दृष्टि से पूर्णरूपेण स्वतन्त्र होता है। त्रिस्तरीय व्यवस्था इस प्रकार है : शीर्ष संस्था के रूप में राष्ट्रीय परिषद्, पृथक्-पृथक् मन्त्रालयों के स्तर पर विभागीय परिषद्/संलग्न तथा अधीनस्थ कार्यालयों सहित विभाग, और स्थानीय समस्याओं से निबटने के लिए प्रत्येक कार्यालय की क्षेत्रीय/कार्यालयीय परिषदें।

संयुक्त वार्ता तन्त्र में निम्नलिखित पदाधिकारियों को छोड़कर शेष सभी लोक-सेवक शामिल होते हैं— (1) वर्ग प्रथम सेवाएँ, जिन्हें अब ग्रेड 'ए' सेवाएँ कहा जाता है; (2) केन्द्रीय सचिवालय सेवा के अतिरिक्त वर्ग द्वितीय ग्रेड 'बी' सेवाएँ; (3) औद्योगिक प्रतिष्ठानों में प्रबन्धकीय, प्रशासकीय एवं निरीक्षणात्मक पदों पर नियुक्त अधिकारी; (4) संघीय क्षेत्रों के कर्मचारी; तथा (5) पुलिस कर्मचारी।

राष्ट्रीय परिषद्—यह सर्वोच्च निकाय है। इसमें सरकार एवं कर्मचारियों, दोनों पक्षों के प्रतिनिधि होते हैं। मन्त्रिमण्डलीय सचिव इसका अध्यक्ष होता है। सरकारी पक्ष के सदस्यों की संख्या 25 होती है, जो केन्द्रीय सरकार के द्वारा नियुक्त किये जाते हैं। कर्मचारियों के द्वारा अधिकतम 60 सदस्य मान्यता प्राप्त कर्मचारी सभा द्वारा मनोनीत किये जाते हैं। इन विभिन्न कर्मचारी सभाओं में स्थानों का वितरण परिषद् का अध्यक्ष उनसे परामर्श करके करता है। कर्मचारी पक्ष अपने सदस्यों में से एक नेता चुनता है।

राष्ट्रीय परिषद् सरकारी कर्मचारियों से सम्बन्धित सामान्य बातों पर विचार करती है, जैसे न्यूनतम पारिश्रमिक, महँगाई-भत्ता, कुछ सामान्य वर्ग—लिपिक, चपरासी, निम्न श्रेणी के कर्मचारियों—के मामले। इसके अतिरिक्त, ऐसे मामलों पर भी परिषद् विचार करती है जो दो या अधिक विभागों के कर्मचारियों से सम्बन्धित होते हैं। राष्ट्रीय परिषद् ऐसे किसी मामले पर विचार नहीं करती जिसका सम्बन्ध किसी एक विभाग के कर्मचारियों से हो। प्रति चार माह में परिषद् का कम से कम एक अधिवेशन होता है। किसी मामले पर विचार होने के पश्चात् उसे पुनः एक वर्ष के बाद ही उठाया जा सकता है।

विभागीय परिषद्—संयुक्त वार्ता तन्त्र में प्रत्येक विभाग के लिए विभागीय परिषद् की व्यवस्था है। किन्तु एक ही मन्त्रालय के अधीन दो या अधिक छोटे विभागों की एक परिषद् की स्थापना भी की जा सकती है। सेवीवर्ग और प्रशासकीय सुधार विभाग की एक परिषद् है। इसका सम्बन्ध केन्द्रीय सचिवालयीय सेवा के कर्मचारियों से है। विभागीय परिषद् का सम्बन्ध उन सब कर्मचारियों से होता है जो किसी मन्त्रालय के विभाग और उसके अधीनस्थ या संलग्न कार्यालयों में कार्य करते हैं। मन्त्रालय का सचिव सरकारी प्रतिनिधि होता है, और वही विभागीय परिषद् का अध्यक्ष होता है। सरकारी पक्ष में अधिक से अधिक 10 प्रतिनिधि शासन द्वारा मनोनीत किये जाते हैं। कर्मचारी पक्ष में 20 से 30 तक सदस्य हो सकते हैं। यह संख्या कर्मचारियों की कुल संख्या और विभाग की श्रेणियों और संख्याओं पर निर्भर होती है। कर्मचारियों के प्रतिनिधि 3 वर्ष के लिए कर्मचारी सभाओं द्वारा चुने जाते हैं। विभागीय परिषद् का कम से कम तीन या चार माह में एक अधिवेशन होना चाहिए।

क्षेत्रीय या कार्यालय परिषदें—क्षेत्रीय परिषदों का सम्बन्ध किसी क्षेत्र या स्थानीय मामलों से होता है, और ये परिषदें अपने क्षेत्र में काम की परिषदों, कर्मचारियों की कल्याण-क्षमता और काम के स्तर के विकास

Scanned with CamScanner

पर विचार करती हैं। इनकी स्थापना तभी की जा सकती है जबकि विभाग की संरचना की दृष्टि से सम्भव हो। कार्यालय परिषद् में 5 सदस्य सरकारी पक्ष के और 8 कर्मचारी पक्ष के होते हैं।

स्मरणीय है कि ये विभिन्न स्तर एक-दूसरे से पृथक् होते हैं और उनमें कोई स्पष्ट सम्बन्ध नहीं है। पद-सोपान की दृष्टि से ये एकीकृत संस्थान नहीं हैं और इनसे संसदीय शासन के प्रमुख सिद्धान्त—मन्त्रिमण्डलीय उत्तरदायित्व—का अतिक्रमण नहीं होता है।

दो पक्षों में मतभेद की स्थिति में संयुक्त वार्ता तन्त्र योजना के द्वारा अनिवार्य पंचनिर्णय की व्यवस्था है। इसका सम्बन्ध केवल निम्नलिखित बातों से होता है—(1) वेतन और भत्ते, (2) सप्ताह में काम के घण्टे, तथा (3) अवकाश।

पंचनिर्णय मण्डल के निर्णयों से दोनों पक्ष बाध्य होते हैं—उन पर संसद का सर्वोपरि अधिकार अवश्य होता है। 1993 तक पंचनिर्णय मण्डल ने 201 निर्णय दिये हैं, जिनमें से 148 निर्णय कर्मचारी वर्ग के पक्ष में रहे। किसी भी मामले में संसद ने हस्तक्षेप करने में रुचि नहीं दर्शायी।

1966 में इस योजना के प्रारम्भ होने के बाद राष्ट्रीय परिषद् ने 38 साधारण तथा 2 विशेष बैठकें की हैं। इसके अतिरिक्त इसकी स्थायी समिति तथा अन्य समितियाँ भी समय-समय पर बैठकें करती रहती हैं।

संयुक्त वार्ता तन्त्र का विवेचन रेलों में वार्ता व्यवस्था के उल्लेख के बिना अधूरा रहेगा। रेलों में औद्योगिक शान्ति गम्भीर रूप से महत्वपूर्ण है और सरकार यह अच्छी तरह जानती है। अतएव 1951 में ही रेलों ने संयुक्त वार्ता तन्त्र के अतिरिक्त एक स्थायी वार्ता तन्त्र की स्थापना की, जिसमें भारत के दो सर्वाधिक शक्तिमान कर्मचारी संघ—अखिल भारतीय रेल कर्मचारी महासंघ और भारतीय रेल कर्मचारियों का राष्ट्रीय महासंघ—भाग लेते हैं। यह योजना रेल कर्मचारियों तथा सरकार के बीच विवादों एवं मतभेदों को सुलझाने का प्रयत्न करती है। जब महासंघों और सरकार के बीच कोई समझौता नहीं हो पाता, तो मामला एक तदर्थ रेलवे ट्रिब्यूनल को सौंप दिया जाता है, जिसमें श्रमिकों तथा रेल प्रशासन के प्रतिनिधि होते हैं और जिसका अध्यक्ष एक निष्पक्ष व्यक्ति होता है। सरकार स्थायी वार्ता तन्त्र को बहुत महत्व देती है क्योंकि इसकी सर्वाधिक चिन्ता रेलों में औद्योगिक शान्ति कायम रखना है। इसे अच्छी तरह मालूम है कि रेल कर्मचारियों द्वारा हड़ताल करने से समाज का संगठित जीवन पंगु हो सकता है।

निष्कर्ष—चतुर्थ वेतन आयोग (1986) ने संयुक्त वार्ता तन्त्र का अनुमोदन कर दिया और इसका कार्य सन्तोषजनक पाया। यह मत सतही है, सत्य नहीं। भारत में संयुक्त वार्ता तन्त्र की व्यवस्था अधिक प्रभावकारी सिद्ध नहीं हुई है। ह्विटलेवाद का सार आदान-प्रदान की भावना पर आधारित है, और इस भावना का भारत के संयुक्त वार्ता तन्त्र में अभाव है। भारत में सरकार कर्मचारी पक्ष को अपने विश्वास में लेने में असमर्थ रही है। परिणामस्वरूप, परिषदों के अधिवेशनों में महत्वहीन मामलों पर विचार होता रहता है और अनेक तात्कालिक महत्व के मामले विचार के लिए आ ही नहीं पाते हैं। परिषदों के अधिवेशन अनियमित रूप से होते हैं और अधिवेशनों में विचारार्थ प्रस्तुत किये जाने वाले मामलों का निश्चय सोच-विचार कर नहीं किया जाता है। संयुक्त वार्ता तन्त्र की योजना को पूरी तरह लागू भी नहीं किया गया है। अभी तक केवल 14 विभागीय परिषदों की स्थापना की गयी है जबकि शासन ने 21 परिषदों की स्थापना का वचन दिया था। इसके अतिरिक्त, ग्रेड 'ए' एवं 'बी' के अधिकारियों से सम्बन्धित कठिनाइयों को दूर करने की कोई व्यवस्था नहीं है। आन्तरिक आपातकाल में (25 जून, 1975 से 23 मार्च, 1977 तक) संयुक्त वार्ता तन्त्र की व्यवस्था को सबसे अधिक धक्का लगा था और यह केवल दिखावटी वस्तु बन गया था। आपातकाल तो समाप्त हुआ, परन्तु संयुक्त वार्ता तन्त्र में जीवन नहीं आ पाया। भारत का ह्विटलेवाद ब्रिटेन के ह्विटलेवाद से कोसों दूर है।

सन्दर्भ

1. *Second Pay Commission*, p. 540.
2. *Staff Councils and Association the U. K. and India*, New Delhi, IJPA, 1960, p. 36.
3. *Second Pay Commission*, p. 541.
4. Maheshwari S. R. : *The Adminstrative Reforms Commission*, 1972, pp. 119-20.
5. *op. cit.*, p. 120.

Scanned with CamScanner